© Eureka Journals 2022. All Rights Reserved. International Peer Reviewed Referred Journal

Global Journal of Emerging Trend in Education and Social Science
https://www.eurekajournals.com/GJETESS.html
ISSN: 2582-1377

लेष्याध्यान द्वारा आदतों का परिष्कार

Dr. Ashok Bhaskar[1], Dr. Nirmala Bhaskar[2]

[1]Asstt. Professor, Jain Vishwa Bharati Institute, Ladnun.
[2]Himalayan Garhwal University, Uttarakhand.

जैनदर्शन का पारिभाषिक शब्द है-लेश्या, जिसका अर्थ है-विशिष्ट रंग वाले पुद्गल द्रव्य के संसर्ग से होने वाला जीव का परिणाम या चेतना का स्तर। लेश्या एक ऐसा चैतन्य स्तर है, जहाँ पहुँचने पर व्यक्तित्व का रूपान्तरण होता है। लेश्या अच्छी या बुरी जैसी होगी, उसके अनुसार व्यक्ति बदल जायेगा। लेश्या के दो भेद हैं-द्रव्यलेश्या और भावलेश्या अर्थात् पौद्गलिक लेश्या और आत्मिक लेश्या। वह निरन्तर बदलती रहती है। लेश्या प्राणी के आभामंडल का नियामक तत्व है। आभामंडल में कभी काला, कभी लाल, कभी पीला, कभी नीला, कभी सफेद रंग उभर आता है। भावों के अनुरूप रंग बदलते रहते हैं। उत्तराध्ययन में छह कर्मलेश्या और उससे संबंधित भाव आदि का विस्तृत विवरण मिलता है। लेश्या के छह प्रकार हैं

1. कृष्ण लेश्या
2. नील लेश्या
3. कापोत लेश्या
4. तैजस लेश्या
5. पद्म लेश्या
6. शुक्ल लेश्या।

हमारी शक्तियाँ, भाव या आदतें इन सबको उत्पन्न करने वाला सशक्त तंत्र है-लेश्या-तंत्र। बुरी आदतों को उत्पन्न करने वाली तीन लेश्याएँ हैं-कृष्ण, नील और कापोत। क्रूरता, हिंसा, कपट, प्रवंचना, प्रमाद, आलस्य आदि जितने दोष हैं, ये सब इन तीन लेश्याओं से उत्पन्न होते हैं।[1] इसका त्याग कर ही मनुष्य अनुत्तर संवेग को प्राप्त होता है।[2] इसी प्रकार अच्छी आदतों को उत्पन्न करने वाली तीन लेश्याएँ हैं-तैजस, पद्म एवं शुक्ल। ये तीनों धर्म या प्रशस्त लेश्याएँ कहलाती हैं। इनसे जीव प्रायः सुगति को प्राप्त होता है।[3]

© Eureka Journals 2022. All Rights Reserved. International Peer Reviewed Referred Journal

लेश्याध्यान के द्वारा लेश्याएँ बदल जाती हैं। कृष्ण लेश्या शुद्ध होते-होते नीले लेश्या में, नील लेश्या कापोत लेश्या में और कापोत लेश्या तेजोलेश्या में बदल जाती है। तेजोलेश्या के आते ही आदतों में अपने आप परिवर्तन होने लगता है। उनमें स्वभावत रूपान्तरण शुरू हो जाता है। पद्म लेश्या में और अधिक बदलाव आता है। शुक्ल लेश्या में पहुँचते ही व्यक्तित्व का पूरा रूपान्तरण हो जाता है। भावधारा (लेश्या) के आधार पर आभामंडल बदलता है और लेश्याध्यान के द्वारा आभामंडल को बदलने से भावधारा भी बदल जाती है। इस दृष्टि से लेश्याध्यन या चमकते हु एरंगों का ध्यान बहु तही महत्तवपूर्ण है।[4]

उत्तराध्ययन आदि आगमों में लेश्या का विस्तार से चित्रण है किन्तु मनोनुशासनम् में भी लेश्या का उल्लेख है ''कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यादात्मपरिणामो लेश्या''।[5] कृष्ण, नील आदि पुद्गल द्रव्यों के निमित्त से जो आत्मपरिणाम होता है, उसे लेश्या कहा जाता है। आगे यहाँ भी छह प्रकार की लेश्याओं का उल्लेख है ''कृष्ण-नील-कापोत-तेज-पद्म शुक्ला''।[6]

कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यात्, परिणामोऽयमात्मनः।
स्फटिकस्यैव तत्रायं लेश्या-शब्दः प्रवर्तते।।

इस प्रसिद्ध श्लोक की ध्वनि यही है कि कृष्ण आदि लेश्या पुद्गल जैसे होते हो वैसी ही मानसिक परिणति होती है। आत्मिक परिणति होती है। पांच आस्रवों में प्रवृत्त मनुष्य कृष्ण लेश्या में परिणत होता है। अर्थात् उसकी आणविक आभा (पर्यावरण) कृष्ण होती है। जैसे रंग हम ग्रहण करते हैं वैसे ही हमारे भाव, आचार और व्यवहार बन जाते है। स्फटिक के सामने जैसा रंग आता है, वह वैसा ही दीखने लग जाता है। स्फटिक का अपना कोई रंग नहीं होता। आत्मा के परिणामों का भी अपना कोई रंग नहीं होता। सामने जिस रंग के परमाणु आते हैं, परिणाम भी वैसे हो जाते हैं। ये परिणाम ही हमारी भाव-लेश्या है।

मनुस्मृति में सत्त्व रजस् और तमस् के जो लक्षण और कार्य बतलाए गए हैं, वे लेश्या के लक्षण से तुलनीय है।

हमारे भीतर कार्मण शरीर में कर्म का संचय होता है। जब वे कर्म पुद्गल प्रवाहित होकर विद्युत शरीर, तैजस् शरीर में प्रकट होते हैं तब वह कर्म लेश्या कहलाती है। अतः लेश्या को कर्मों का झरना कहा गया है।[7] कर्म लेश्या का जैसा प्रवाह भीतर से आता है, वैसी ही हमारी आत्म परिणति हो जाती है। वह आत्म-परिणति भाव लेश्या है। उन कर्म पुद्गल-परमाणुओं में वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श ये चारों होते हैं। उनमें रंग मनुष्य के शरीर और मन को अधिक प्रभावित करता है इसलिए रंग के आधार पर

© Eureka Journals 2022. All Rights Reserved. International Peer Reviewed Referred Journal

लेश्याओं का नामकरण किया गया है। उत्तराध्ययन सूत्र में छह कर्म लेश्या और उससे सम्बन्धित भाव आदि का विस्तृत वर्णन मिलता है।

कर्म लेश्या के छः प्रकार हैं-कृष्ण लेश्या, नील लेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या।

बाह्य जगत् में सूर्य का प्रकाश, विभिन्न रंग की किरणें, रत्नों की रश्मियां, शरीर का वर्ण आदि नोकर्म लेश्या कहलाती है।

रंगों (नोकर्म लेश्या) के ध्यान से भावों में (भाव लेश्या) परिवर्तन हो जाता है। इसकी प्रक्रिया यह है कि उन रंगों की कल्पना कर साक्षात् करने का अभ्यास करना। गौतम ने भगवान् से पूछा-भंते! क्या कृष्ण लेश्या, नील लेश्या के पुद्गलों को प्राप्त कर तदनुरूप (नीललेश्या) में परिणत हो जाती है।[8]

महावीर ने कहा-गौतम! ऐसा होता है। कृष्ण लेश्या केवल नील लेश्या के रूप में ही परिणत नहीं होती किन्तु वह कापोत लेश्या, तेजो लेश्या, पद्म लेश्या और शुक्ल लेश्या के रूप में भी परिणत हो जाती है।

कृष्ण, नील और कापोत-ये तीनों अधर्म लेश्याएं हैं। इन तीनों से जीव प्रायः दुर्गति को प्राप्त होता है।[9] इनका त्याग कर मनुष्य अनुत्तर संवेग को प्राप्त होता है।[10] इसी प्रकार तैजस्, पद्म और शुक्ल-ये तीनों धर्म लेश्याएं हैं। इन तीनों से जीव प्रायः सुगति को प्राप्त होता है।[11] इन्हें क्रमशः प्राप्त कर मनुष्य अनुत्तर संवेग को प्राप्त होता है।

विज्ञान की दृष्टि, योग-शास्त्रीय दृष्टि एवं लेश्या सिद्धांत की दृष्टि-इन तीनों की तुलनात्मक दृष्टि से लेश्या के सिद्धांत में जो तीन लेश्याएं हैं, योग-शास्त्र की दृष्टि में जो तीन चक्र है और विज्ञान की दृष्टि में जो एड्रीनल और गोनाड्स ग्रन्थियां है-इन सबका काम समान-सा है। लेश्या का सिद्धांत मानता है कि सारी आदतें तीन लेश्याओं में जन्म लेती है।

योगशास्त्र मानता है कि सारी आदतें तीन चक्रों में जन्म लेती है और विज्ञान के अनुसार ये सारी आदतें दो ग्रन्थियों में जन्म लेती है, अद्भुत समानता है तीनों प्रतिपादनों में। यह सत्य स्पष्ट हो गया कि सारी बुरी वृत्तियां पेडू के पास वाले स्थान से लेकर नाभि तक का या हृदय के स्थान तक जन्म लेती हैं। इतना ही स्थान है इनका। इस सत्य को समझ लेने पर भावों को बदलने की भावना को समझने में बहु तसरलता हो जाती है।

कषाय या अतिसूक्ष्म (कार्मण) श्रीर में केवल स्पंदन है, केवल तरंगें है। वहां भाव नहीं है वहां चेतना के स्पंदन और कशाय के स्पंदन है। दोनों में स्पंदन ही स्पंदन है, तरंगें ही तरंगें है। उदाहरणार्थ, क्रोध

© Eureka Journals 2022. All Rights Reserved. International Peer Reviewed Referred Journal

कषाय का एक रूप है। अति सूक्ष्म शरीर में क्रोध की केवल तरंगें होती है। चैतन्य की तरंगों के साथ जब क्रोध की तरंगें मिलती है, तो क्रोध के अध्यवसाय बनते है। वहां तक कोरी तरंगें है, भाव नहीं। बाद में जो तरंगें तैजस् शरीर के साथ सघन होकर भाव का रूप लेती है, वे लेश्या बन जाती है। लेश्या में पहुंचकर भाव बनता है और तरंगें ठोस रूप ले लेती है। शक्ति या ऊर्जा पदार्थ में बदल जाती है। तरंग का सघन रूप है भाव और भाव का सघन रूप है क्रिया। जब भाव सघन होकर क्रिया बन जाती है, तब वह स्थूल शरीर में प्रकट होती है।

प्राणी न शुद्ध अर्थ में आत्मा है और न शुद्ध अर्थ में जड़ पदार्थ है। वह एक यौगिक पदार्थ है। चैतन्य और पदार्थ का योग है। आत्मा का लक्षण है चैतन्य। पदार्थ का लक्षण है-वर्ण, गंध, रस और स्पर्श। प्राणी का आभामंडल दो प्रकार की ऊर्जाओं के संयुक्त विकिरण से बनता है-एक चैतन्य द्वारा प्राण-ऊर्जा का विकिरण और दूसरा भौतिक शरीर द्वारा विद्युत् चुम्बकीय ऊर्जा का विकिरण। प्राण-ऊर्जा के विकिरण का आधार है-व्यक्ति की भावधारा। भाव चैतसिक है और आभामंडल पौद्गलिक (भौतिक) है, फिर भी भाव और आभामंडल दोनों परस्पर प्रगाढ़ सम्बन्ध रखते हैं। आभामंडल हमारी भावना का प्रतिनिधित्व करता है। इस दृष्टि से भाव के द्वारा आभामंडल की और आभामंडल के द्वारा भाव की व्याख्या की जा सकती है। आभामंडल किसी एक रंग का नही होता। उसमें अनेक रंगों का मिश्रण होता है क्योंकि उसका निर्माण लेश्याओं के आधार पर होता है। लेश्या के रंग व्यक्ति के भाव पर निर्भर करते हैं। जिस व्यक्ति में जिन भावों की प्रधानता होती है, वैसे ही लेश्या के रंग हो जाते हैं।

हमारी भावधारा जैसी होती है, उसी के अनुरूप मानसिक चिंतन तथा शारीरिक मुद्राएं और इंगित तथा अंग-संचालन होता है। क्रोध की मुद्रा में रहने वाले व्यक्ति में क्रोध के अवतरण की संभावना बढ़ जाती है। क्षमा की मुद्रा में रहने वाले व्यक्ति के लिए क्षमा की चेतना में जाना सहज हो जाता है।

रासायनिक परिवर्तन का सबसे बड़ा सूत्र है-ध्यान। चैतन्य-केन्द्रों के ध्यान और लेश्या-ध्यान के द्वारा भीतरी रसायनों में आश्चर्यजनक परिवर्तन होता है, भाव-संस्थान में परिवर्तन होता है और लेश्याओं में परिवर्तन होता है। भीतर से तीव्र विपाक का जो परिस्राव आता है, उस स्राव को ग्रंथियां बाहर लाती है। लेश्या-ध्यान से ग्रंथियां शुद्ध होने लगती है, लेश्याएं शुद्ध होने लगती है, तब अध्यवसाय शुद्ध होने लगते है। जब अध्यवसाय शुद्ध होते है, तब कषाय के तीव्र विपाक नहीं आ सकते-वे मंद हो जाते है। मंद विपाक तीव्र वृत्ति, वासना या बुरी आदत का निर्माण नहीं कर सकते।

संदर्भ ग्रन्थ

1. उत्तराध्ययन, 34/56.
2. गवती आराधना, 1908.

© Eureka Journals 2022. All Rights Reserved. International Peer Reviewed Referred Journal

3. उत्तराध्ययन, 34/57.
4. जीवन विज्ञान की रूपरेखा, पृ. 145.
5. मनोनुशासन्, 4/33.
6. वही, 4/34.
7. उत्तरज्झयणाणि वृहद्वृत्ति, पत्र 650.
8. प्रज्ञापना 17/4.
9. उत्तरज्झयणाणि 34/56
10. भगवती आराधना 1908.
11. उत्तरज्झयणाणि 34/57.